सांप्रदायिकता की आग में राजनीतिक रोटियां सिकती हैं, गरीबों का चूल्हा नहीं

जिस तरह भारत में कुछ शरारती लोग सोशल मीडिया में कभी 'मक्का' में शिवलिंग बता कर अथवा ताजमहल को तेजोमय मन्दिर बताकर उन्माद एवं तनाव बढ़ाने की कोशिश करते हैं, उसी तरह का काम बांग्लादेश में भी होता है। इसी का परिणाम है कि बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद बांग्लादेश में अल्पसंख्यक समुदाय के लगभग ढाई हजार मकानों, 3600 पूजा स्थलों को क्षति पहुचाई तथा सैकड़ों लोगों की हत्या हुई थी...

हाल ही में बांग्लादेश यात्रा से लौटकर आए सुप्रीम कोर्ट में एडवोकेट राम मोहन राय करा रहे हैं वहां के हालातों से रू—ब—रू....

बांगलादेश की पांच दिवसीय यात्रा के दौरान कुछ अन्य बातों के अतिरिक्त एक बात हमेशा कौंधती रही कि इस सेक्युलर देश मे साम्प्रदायिक सद्भाव एवम समरसता की क्या स्थिति है। बांग्लादेश की लगभग 14 करोड़ जनसंख्या में लगभग डेढ़ करोड़ जनसंख्या हिन्दुओं की है और इसके बाद बौद्ध, सिख एवं ईसाई आबादी है।

दुनिया में हिन्दू आबादी को संख्या की दृष्टि से जानें तो यह दुनिया का भारत, नेपाल के बाद तीसरा देश है और यदि प्रतिशत के हिसाब से जाने तो यह पांचवां देश है। 1905 का बंग-भंग का दंश अंग्रजो की 'तोड़ो और राज करो' नीति ने बंगाल की इस धरती को दिया था, जिसका विरोध बंगाल के समस्त तत्कालीन नागरिकों ने मिल कर किया था।

खुद कविगुरु रवीन्द्र नाथ ठाकुर, सामान्य जनता के साथ अपने गीत एवम कविताओं का पाठ करते सड़कों पर उतरे थे, परिणाम स्वरूप अंग्रेज शासन को अपना यह आदेश वापिस लेना पड़ा था, परन्तु विभाजन का बीज तो बोया जा चुका था जिसकी परिणति सन 1947 में भारत विभाजन के रूप में हुई।

पाकिस्तान के संस्थापक मो. अली जिन्ना ने मजहब के नाम पर दो राष्ट्र की मांग की, जिसे हिन्दू महासभा के अनेक नेता पहले ही कर चुके थे। सम्प्रदाय के नाम पर भारत का विभाजन, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की भरसक विरोध के बावजूद हुआ।

पाकिस्तान का विश्व मानचित्र पर आना एक अजीब ही शक्ल लिए था, जिसका एक तरफ हिस्सा पूर्वी पाकिस्तान कहलवाया तथा इसके सैकड़ो मील दूर का हिस्सा पश्चिमी पाकिस्तान का नाम दिया गया। एक ऐसा देश जिसके दो हिस्सों की सीमाएं मिलती ही नहीं थी, पर जिसे मजहबी आधार पर एक कहा गया था।

इतिहास ने यहां फिर साबित किया कि धर्म का राजनीति से घालमेल एक निरर्थक एवं बकवास कवायद है, जो जोड़ने की नहीं तोड़ने का काम करती है। कायदे आजम जिन्ना एक मजहब, एक जुबान और एक निशान पर अडिग थे जो पाकिस्तान के ही दूसरे हिस्से में रहने वाले मुसलमानों को स्वीकार नहीं थी और यहीं से दो राष्ट्र सिद्धान्त की असफलता की कहानी शुरू होती है और जिसकी परिणति हुई भाषा के नाम पर बने बांग्लादेश का अभ्युदय।

भारत विभाजन के बाद निर्दयी पाकिस्तानी सेना ने धर्म के नाम पर वर्तमान बांग्लादेश में दूसरे धर्म के अनुयायिओं पर जुल्म में कोई कसर नही छोड़ी। कुछ पलायन भी हुआ परन्तु वह अल्पसंख्यक आबादी जिन्होंने सन 1947 में ही तय कर लिया था कि किसी भी कीमत पर अपनी मातृभूमि को नही छोड़ेगे, विवश नहीं कर सके।

1947 का विभाजन का मंजर बहुत ही यातनापूर्ण था। पंजाब, सिंध, बंगाल से करोड़ों लोगों की अदला बदली हुई थी। हजारों लोग मारे गए थे, अरबों रुपये की संपत्ति का नुकसान हुआ था, मां -बहनों की इज्जत लूटी गई थी। ऐसे हालात में देश को आजादी मिली थी।

देश का पिता महात्मा गांधी 15 अगस्त, 1947 को आजादी के जश्न में शामिल न होकर दिल्ली से सैंकड़ो मील दूर कोलकाता में साम्प्रदायिक सद्भाव के लियेअपनी जान कुर्बान करने को तत्पर था। एक प्रश्न तथा उसका एक ही जैसा उत्तर इधर - उधर दोनों तरफ है कि जब धर्म के नाम पर बटवारा हो ही गया था तो बटवारे के समय सभी हिन्दू हिंदुस्तान क्यों नही चले गए, तो उसका जवाब भी वैसा ही है। विभाजन का फैसला राजनेताओं का राजनीतिक फैसला था उनका नहीं। यह देश उनकी मातृभूमि है, यह उनकी पुरखों की धरती है वे इसे छोड़ कर क्यों जाए? यह उनका देश है, यहीं पैदा हुए थे यही मरेंगे।

1971 में निर्दयी निरंकुश सत्ता से पश्चिमी पाकिस्तान के लोगों को मुक्ति मिली। बांग्लादेश के प्रथम प्रधानमंत्री शेख मुजीबुर्रहमान ने घोषणा की कि नवोदित बांग्लादेश बेशक मुस्लिम बाहुल्य देश होगा, परन्तु यह अन्य सभी धर्मों का आदर करेगा तथा सभी धर्मों को अपना प्रचार प्रसार करने की पूरी छूट होगी।

समूचा बंगाल, वर्तमान सन्दर्भ में बांगलादेश प्राचीन काल से सर्वधर्म समभाव का केंद्र रहा है। प्राचीन मंदिर, गुरुद्वारे, चर्च एवं बौद्ध विहार यहां की एक सुंदर अनुपम विरासत रही है। ढाका में माँ जगदम्बा का ढाकेश्वरी मन्दिर, मां काली मंदिर, चैतन्य महाप्रभु की माई का मन्दिर, गुरु तेग बहादुर महाराज द्वारा गुरु नानकदेव जी महाराज की याद में बनवाया 'नानकशाही गुरुद्वारा' तथा सन 1661 के आस पास बनी चर्च ऐतिहासिक ही नहीं अपितु सभी धर्मों के लोगों के लिये आस्था के केंद्र है।

इतना ही नही बांग्लादेश के कोई छोटा बड़ा कस्बा नही होगा, जहां कोई मन्दिर, चर्च अथवा गुरुद्वारा न हो। यह देख कर अच्छा लगा कि इन धार्मिक स्थलों में दर्शनार्थी सभी तरह के लोग हैं। लक्ष्मीपुर के श्री बलदेव मन्दिर में जाने पर हमें वहाँ की भव्यता के दर्शन भी हुए जो हर प्रकार से मंगलकारी थे।

गांधी आश्रम ट्रस्ट के नोआखाली के पास के 'गांधी स्कूल' में लगभग 450 विद्यार्थी हैं, जिसमे अधिकांश मुस्लिम सम्प्रदाय से ताल्लुक रखते हैं। वहाँ जाकर इन बच्चों से मिलने तथा इनकी एक सभा को सम्बोधित करने का अवसर मिला। सभा का प्रारम्भ बापू की रामधुन से हुआ जिसे सभी बच्चे सस्वर गा रहे थे ।ऐसी सभी सभाओ मे हमारा यह आग्रह रहा कि समापन भारत एवं बांग्लादेश के राष्ट्रगान से हो। बांग्ला बच्चे गुरुदेव रबीन्द्र नाथ द्वारा रचित गीत "आमार सोनार बंगला" गाते और हम उन्हीं गुरुदेव का लिखा "जन गण मन" का गान करते। कुमिला में हमें वह जगह दिखाई गई जहां मुस्लिम लोग अलग से दुर्गा पूजा का उत्सव मनाते हैं।

पर इसका दूसरा पहलू भी है, जिसे हम भारत में भी मुस्लिम लोगों के बारे में सवाल खड़ा करके करते हैं कि फलां धर्म की आबादी इस कद्र बढ़ा रही है कि मौजूदा बहुसंख्यक आबादी कुछ ही वर्षों में अल्पसंख्यक हो जाएगी तथा दूसरी आबादी बहुसंख्यक।

यह एक ऐसा प्रचार है जो अति साम्प्रदायिक तत्व हौवा बनाने के लिए करते हैं ताकि धर्मान्धता बढ़ती रहे, जबकि जनसंख्या बढ़ने के जो आंक्ड़े 1947 में थे वे आज भी बदस्तूर हैं। यानी बांगलादेश में हिन्दू आबादी 8.5 प्रतिशत व भारत में मुस्लिम आबादी लगभग 14 प्रतिशत। पर भय एवं अफवाहों के शगूफे दोनो देशों में छोड़े जाते रहते हैं।

एक तथाकथित मुस्लिम विद्वान बहुत ही विश्वास से कह रहा था कि बांगलादेश में यदि इसी तरह हिन्दू आबादी बढ़ती रही तो सन 1925 तक यहाँ वे बहुसंख्या में हो जाएंगे। जब तथ्यों की तफ्तीश की तो पाया कि हाँ यदि आबादी बढ़ी तो बांग्लादेश जो अब हिन्दू प्रतिशत आबादी में दुनिया में पांचवे नम्बर पर है, वह तीसरे नम्बर पर आ जाएगी, परन्तु इस तरह की मनमाफिक व्याख्या दोनों देशों में होती रहती है।

6 दिसम्बर ,1992 को अयोध्या में बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद सबसे ज्यादा नुकसान हिन्दू मंदिरों एवं अल्पसंख्यकों की सम्पत्ति के नुकसान का हुआ है। जो काम पाकिस्तान शासन नहीं कर पाया वह अब हुआ।

एक जानकारी के अनुसार बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद अकेले बांग्लादेश में अल्पसंख्यक समुदाय के लगभग ढाई हजार मकानों, 3600 पूजा स्थलों को क्षति पहुचाई तथा सैकड़ों लोगों की हत्या हुई, हजारों घायल हुए।

इसके बावजूद भी सामान्य जन में शांति व सद्भाव की आकांक्षा है। वे इसे निहित स्वार्थी लोगों की ही करतूत मानते हैं। जबकि जैसा कि हमारे देश में भी होता है कुछ शरारती लोग सोशल मीडिया में कभी "मक्का" में शिवलिंग बता कर अथवा ताजमहल को तेजोमय मन्दिर बताकर उन्माद एवं तनाव ब?ाने की कोशिश करते हैं, जिसे सिविल सोसाइटी के लोग तथा शासन के संजीदा अधिकारी बेहद समझदारी से हल करते हैं।

अच्छा हो सभी इन फिजूल की बातों से उठ कर प्रेम, भाईचारे तथा सदभाव का संदेश दे, इसी से मानवता बचेगी। दोनों देशों में ऐसी ताकते हैं जो अपनी राजनीतिक रोटी ही हिन्दू-मुसलमान की नफरत की आग पर सेंकते हैं, वे यह नहीं जानते कि इस आग से तुम्हारा तो काम बन जाता होगा, पर गरीब का चूल्हे की आग नहीं जलती।

(एडवोकेट राम मोहन राय गांधी ग्लोबल फैमिली के महासचिव और एसोसिएशन ऑफ पीपुल्स ऑफ एशिया के समन्वयक हैं।)

खबर (दार) झरोखा

विकास नारायण राय

सीसीटीवी से यौनिक हिंसा नहीं रुकेगी !

डेंगू की रोकथाम के लिए क्या आप स्थानीय अस्पताल में नई एमआरआई मशीनें लगाने के उपाय को प्रचारित करेंगे? केजरीवाल सरकार का यौनिक हिंसा के विरुद्ध सीसीटीवी का प्रस्तावित जतन भी कुछ ऐसा ही है।

असरहीन सिद्ध हो रहे पाक्सो एक्ट के सन्दर्भ में, सीसीटीवी से यौन हिंसा पर लगाम लगा पाने का शोर-शराबा बरबस ध्यान आकर्षित करता है। गैर सरकारी संगठन 'सेव द चिल्ड्रेन' के सर्वेक्षण 'विंग्स 2018 = वर्ल्ड ऑफ इंडियाज गर्ल्स' के हाल में जारी आंकड़ों के अनुसार देश में तीन में से एक किशोरी सार्वजनिक स्थानों पर यौन हिंसा के डर के साये में जीने को मजबूर होती है। सर्वेक्षण में महाराष्ट्र, तेलंगाना, पश्चिम बंगाल, असम और मध्य प्रदेश के साथ रेप कैपिटल के नाम से कुख्यात दिल्ली-एनसीआर को भी शामिल किया गया था।

हालाँकि, इसके बरक्स सरसरी नजर भी डालिए तो लगेगा जैसे यौनिक हिंसा रोकने के नाम पर सरकारी पहल कम नहीं हुई हैं। वर्मा कमीशन, पाक्सो एक्ट, त्वरित न्यायालय, महिला थाना, फांसी की सजा इत्यादि भारी भरकम कवायदें ही नहीं, तमाम फुटकर किस्म की व्यस्तता भी दिख जाएंगी। मसलन, दिल्ली पुलिस इस बार फिर स्कूली छुट्टियों में लड़कियों के लिए आत्म रक्षा के वार्षिक जूडो- कराते अभ्यास आयोजित कर रही है। वर्षों से वे यह दिलचस्प कवायद करते आ रहे हैं, हालाँकि यौनिक हिंसा पर इसके किसी असर से बेखबर।

इस बीच सर्वोच्च न्यायालय ने समयबद्ध रूप से पाक्सो ट्रायल समाप्त करने के लिए हर राज्य में तीन हाई कोर्ट जजों की कमेटी गठन के निर्देश जारी कर दिए, जबकि मोदी सरकार बारह वर्ष से कम पीड़ित के मामले में फांसी की सजा का संशोधित पाक्सो प्रावधान ले कर आ गयी। इसी क्रम में, दिल्ली की निर्वाचित केजरीवाल सरकार और मोदी सरकार के थोपे हुए उप राज्यपाल के बीच, सार्वजनिक स्थानों पर सीसीटीवी लगाने में हो रही देरी को लेकर परस्पर दोषारोपण का सिलसिला तूल पकड़ गया है। स्त्री सुरक्षा के नाम पर मुख्य मंत्री को धरने पर बैठे हुए देखना और उप राज्यपाल को जवाब में नियमित प्रेस विज्ञप्तियां जारी करना, रोज-रोज नहीं होता। बेशक इनका नतीजा टांय-टांय फिस्स ही क्यों न हो।

विसंगति देखिये कि करीब अठारह सौ करोड़ के खर्च से प्रस्तावित दिल्ली सरकार की सीसीटीवी योजना में ऐसा कुछ है भी नहीं जो यौन हिंसा की रोकथाम में सहायक हो। हाँ, अपने मौजूदा स्वरूप में, कुछ हद तक, सीसीटीवी का जाल यौन हिंसा के बाद पुलिस की छान-बीन में सहायक अवश्य हो सकता है। यानी सीसीटीवी के बाद भी, यौन हिंसा की आवृत्ति और असुरक्षा की आशंका ज्यों की त्यों बनी रहेगी।

दरअसल, पाक्सो एक्ट 2012, त्वरित न्यायालय, महिला थाना और फांसी की सजा जैसे प्रावधानों में भी संभावित यौन हिंसा से बचाव का पहलू नदारद रहा है। पाक्सो एक्ट का पूरा नाम प्रोटेक्शन ऑफ चिल्ड्रेन फ्रॉम सेक्सुअल ओफेंसेज है। लेकिन यह एक्ट भी अपराध हो जाने के बाद ही गति पकड़ सकता है। लिहाजा, सोचने की बात है कि इसकी मार्फत यौन हिंसा से बचाव का सवाल कहाँ से पैदा होगा भला?

इसी तरह, त्वरित न्यायालय और फांसी की सजा भी बचाव के पूर्व उपाय नहीं, अपराध हो जाने के बाद दोषी को दंड थमाने की कवायद हुये। दुनिया में कोई अध्ययन ऐसा नहीं है जो इन कदमों का यौन अपराध की रोकथाम से कोई प्रत्यक्ष या परोक्ष सम्बन्ध जोड़ पाता हो। यह भी छिपा नहीं कि अलग से महिला थाना बनाने का बहु प्रचारित प्रयोग, स्त्री संवेदी पुलिस दे पाने में सरकारी नाकामी पर ढक्कन लगाना मात्र सिद्ध हुआ है।

सीसीटीवी का हश्र भी इन उपायों से भिन्न नहीं होगा। अपने आप में सीसीटीवी एक विडियो रिकॉर्डिंग की युक्ति भर है जो पीड़ित के बचाव का नहीं, अपराध के अनुसन्धान का साधन होती है। केजरीवाल सरकार और दिल्ली के उप राज्यपाल या तो इस बुनियादी तथ्य को समझते नहीं या उनकी दिलचस्पी स्त्री सुरक्षा के नाम पर महज राजनीति करते रहने में है।

दिल्ली पुलिस को, जो उप राज्यपाल से निर्देश लेती है न कि निर्वाचित सरकार से, इस सीसीटीवी परियोजना का असली करता-धरता होना चाहिए था, लेकिन उसके तेवर ऐसे दिखते हैं जैसे मौजूदा विवाद से उसे कुछ लेना-देना न हो। बिजली की व्यवस्था से अंधेरी जगहों को सुरक्षित करने में उसका सरकार से सामंजस्य पत्राचार में अटका रहता है। उसकी बीस प्रतिशत क्षमता विशिष्ट जनों की सुरक्षा को समर्पित रहती है। फिलहाल, उसे मुख्य मंत्री आवास की मीटिंग में मुख्य सचिव पर धावा बोलने जैसे चिरकुट आरोप में केजरीवाल को उलझाये रखने में व्यस्त रहना सर्वाधिक मुफीद आ रहा है।

इन सब के बावजूद, क्या सीसीटीवी का इस्तेमाल यौन हिंसा से बचाव के औजार के रूप में नहीं हो सकता? इसके लिए सीसीटीवी को एक रिकॉर्डिंग युक्ति से एक रियल टाइम निगरानी-कार्यवाही युक्ति में बदलना होगा। यह सीसीटीवी लगाने की वर्तमान लागत से सैकड़ों गुना खर्चीला उपक्रम साबित होगा। और यह खर्च निरंतर चलने वाला होगा। यूँ समझ लीजिये कि नए सिरे से एक और अपराध रोकथाम की व्यवस्था, दिल्ली पुलिस के समानान्तर, खड़ी करनी होगी। समूची दिल्ली को कवर करने के लिए तो लाखों सीसीटीवी कैमरे चाहिए। आइये, केवल चालीस हजार कैमरों के लिए गणना करें। यदि चार कैमरों को एक व्यक्ति देखे तो दस हजार कर्मी प्रति शिफ्ट चाहिए। तीन शिफ्ट में चौबीस घंटे कैमरों पर नजर रखने के लिए यह संख्या होगी तीस हजार। कैमरों से प्राप्त सूचना की जाँच-पड़ताल में तुरंत मौके पर पहुँच कर अपराध रोकने और पकड़- धकड़ के लिए कम से कम एक हजार चल टीम चाहिए- मान लीजिये सौ वैन और नौ सौ मोटर साइकिल। प्रति वैन चार और प्रति मोटर साइकिल दो व्यक्ति यानी प्रति शिफ्ट बाईस सौ। तीन शिफ्ट के लिए छाछठ सौ। इस तरह हुए कुल छत्तीस हजार छह अतिरिक्त सौ कर्मी।

इस संख्या में एक प्रतिशत सुपरवाइजरी स्टाफ, एक प्रतिशत सपोर्ट स्टाफ और एक प्रतिशत टेक्निकल-मेन्टेनेंस स्टाफ शामिल कीजिये। मोटा-मोटा बना चालीस हजार का आंकड़ा। इसके ऊपर दस प्रतिशत लीव रिजर्व भी। यानी कुल हुए चौआलिस हजार (44,000)। इनकी ट्रेनिंग, हथियार और हाउसिंग का बंदोबस्त अलग से। दिल्ली पुलिस की मौजूदा नफरी है लगभग अस्सी हजार जिसके लिए भी ट्रेनिंग, हथियार और हाउसिंग का टोटा बना रहता है। उपरोक्त व्यवस्था अभी दिल्ली में प्रस्तावित भी नहीं है। न केजरीवाल के अनुमान में और न उप राज्यपाल के एतराज में। मान लीजिये, आज मोदी और केजरीवाल लड़ना छोड़ कर यह सब कर दिखाने का बीड़ा उठा भी लें तो उनके अमले को दस वर्ष लगेगा इस व्यवस्था को जमीन पर साकार करने में। यानी शेख चिल्ली की हवाई दुनिया में ही रहना है स्त्री सुरक्षा को! पाक्सो एक्ट, त्वरित न्यायालय, महिला थाना, फांसी की सजा जैसी युक्तियों के बावजूद, सीसीटीवी के भरोसे भी!

ऐसे में एक संजीदा सरकार क्या करे? सर्वप्रथम तो ऑडिट करे कि यौन हिंसा रोकने में किस युक्ति का कितना असर हो रहा है? इंदौर की एक अदालत ने 23 दिन के ट्रायल में बाल बलात्कारी हत्यारे को फांसी की सजा सुना दी। मुझे संदेह है कि यह फांसी उच्चतम न्यायालय के 'रेयरेस्ट ऑफ द रेयर' सिद्धांत पर खरी उतरेगी। हिसार महिला थाना की महिला एसएचओ, जिसने अपने थाने को झूठे यौन आरोपों की आड़ में जबरन वसूली का अड्डा बना रखा था, गिरफ्तारी से बचने के लिए फरार चल रही है। यौन हिंसा के सतत निशाने पर होती स्त्री के लिए सामाजिक सशक्तीकरण और संवेदी न्याय प्रणाली अभी बहुत दूर की बाते हैं। कृपया सीसीटीवी जैसे एक और दिशाहीन दावे की राजनीति तो बंद कीजिये!